AKSHAR WANGMAY

International Peer Reviewed Journal

UGC CARE LISTED JOURNAL

October 2021

Special Issue,Volume-III

On

SUSTAINABLE DEVELOPMENT AND ENVIRONMENTAL ISSUES

Chief Editor

Dr. Nanasaheb Suryawanshi

Pratik Prakashan, 'Pranav, Rukmenagar, Thodga Road Ahmedpur,
Dist. Latur, -433515, Maharashtra

Executive Editor

Dr. Y. M. Chavan

I/C Principal

Sahakarbhushan S. K. Patil College, Kurundwad.

Co-Editor

Prof. R. S. Kadam

Head Dept. of Geography

Vice Principal / IQAC Coordinator

Editorial Board

Assi. Prof. S. B. Dongle
Assi. Prof. Y. B. Badame
Assi. Prof. P. A. Hulwan
Assi. Prof. D. T. Hujare
Assi. Prof. A. V. Patole

Published by- Dr. Y. M. Chavan, I/C Principal, Sahakarbhushan S. K. Patil College, Kurundwad.

The Editors shall not be responsible for originality and thought expressed in the papers. The author shall be solely held responsible for the originality and thoughts expressed in their papers.

© All rights reserved with the Editors Price:Rs.1000/-

18	दुष्काळ - एक नैसर्गिक आपत्ती **प्रा.लक्ष्मी नरहरी पवार**	73-76
19	इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यासों में अभिव्यक्त पारिस्थितिकी प्रदूषण **प्रा.एन. बी. एकिले , प्रो.डॉ. सदानंद भोसले**	77-81
20	सामावेशक आणि शाश्वत विकासामध्ये भारत सरकाराची भुमिका **डॉ. गंगाधर रामराव भुक्तर**	82-85
21	नैसर्गिक संसाधनाच्या संवर्धनात व्यक्तीची भूमिका **प्रा. डॉ. दत्तात्रय शिंदे**	86-89
22	स्वतंत्रोतर काल में लोकसभा में बिहार के काँग्रेसी सांसदों की ह्रासोन्मुख हिस्सेदारी एक भौगोलिक विश्लेषण **सूरज प्रकाश**	90-93
23	भारतरत्न डॉ.ए.पी.जे. अब्दुल कलाम अमृत आहार योजना संदर्भ- महाराष्ट्र राज्य **प्रा. नितिन विश्वनाथ खरात, प्राचार्य डॉ. रविंद्र भा. घागस**	94-96
24	एकविसावे शतक आणि आपत्ती **प्रा. अशोक नारायण गायकवाड**	97-99
25	मराठे कालीन दुष्काळी धोरणांचा चिकित्सक अभ्यास **डॉ. शिरीष शेषराव पवार**	100-103
26	आधुनिक तुर्कस्थानच्या जडण - घडणीतील कमाल पाशा यांचे योगदान **डॉ. संतोषकुमार धनसिंग कांबळे**	104-109
27	मराठी राज्याचा भौगोलिक दृष्टीकोनातून केलेला चिकित्सक अभ्यास **डॉ. दिपक वामनराव सुर्यवंशी**	110-113
28	सोलापूर जिल्ह्यातील हातमाग व यंत्रमाग उद्योगांचे मूल्यमापन: एक चिकित्सक अभ्यास **सत्याप्पा शंकर कोळी, डॉ. एस. एन. माने**	114-116
29	आदिवासी समाजाच्या विविध समस्या : एक शोध **प्रा.डॉ. सोनवले राजकुमार रंगनाथ**	117-119
30	नंदुरबार जिल्ह्यातील बदलत्या पर्जन्य वितरणाचा अभ्यास एक भौगोलिक विश्लेषण **डॉ. संदीप भास्करराव गरुड**	120-123
31	बिहार के अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों में शिक्षा की स्थिति का भौगालिक अध्ययन **सुमन ग्रे**	124-127
32	शाश्वत विकासाच्या संदर्भात भारतातील पर्यावरणीय स्थिती आणि समस्या **डॉ. विशाल डब्यूमालेकार**	128-131
33	राष्ट्रीय शैक्षणिक धोरणामध्ये गुणवत्ता विकासामध्ये शिक्षकांची भूमिका **डॉ. प्रभाकर बुधारम**	132-135
34	महिला वॉलीबॉल खिलाड़ियों के प्रदर्शन से संबंधित फिटनेस घटकों पर सर्किट प्रतिरोध प्रशिक्षण और एरोबिक सर्किट प्रतिरोध प्रशिक्षण के प्रभाव **डॉ. श्वेता. एन. दवे**	136-140

इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यासों में अभिव्यक्त पारिस्थितिकी प्रदूषण

प्रा.एन. बी. एकिले[1] प्रो.डॉ. सदानंद भोसले[2]

[1]सहायक प्राध्यापक एवं शोधार्थी, सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे

[2]प्रोफेसर, हिंदी विभाग सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे

वैश्विक स्तर पर इक्कीसवीं शताब्दी की चिंता का मुख्य केंद्र पारिस्थितिकी-संकट है। पारिस्थितिकी और मनुष्य का रिश्ता आदिम युग से ही अटूट रहा है। प्राचीन भारतीय संस्कृति में पारिस्थितिकी की शुद्धता पर विशेष बल दिया है। पंचमहाभूतों से निर्मित सभी जीव-जन्तु, प्राणी पारिस्थितिकी की गोद में प्रेमपूर्वक विचरण करते हैं। मानव भी अन्य प्राणियों की भांति पारिस्थितिकी तंत्र का एक प्रधान अंग है। पारिस्थितिकी और मानव का चोली-दामन का रिश्ता रहा है। पारिस्थितिकी के प्रति अपने कृतज्ञता भाव को व्यक्त करने के लिए मनुष्य ने पारिस्थितिकीय उपादानों जैसे हवा, पानी, पेड़-पौधे, सूर्य, चंद्र, अग्नि आदि को ईश्वर मानकर उनकी पूजा अर्चना की है। मानव द्वारा दिए गए आदर और स्नेह भाव को प्रकृति हमेशा स्वीकार करती रही है तथा उस पर अपनी कृपा दृष्टि बनाएँ रखती है। द इक्कोक्रिटिसिज्म रीडर में लिखा हैं कि "मानव संस्कृति प्रकृति के अभेद रूप से जुड़ी हुई है, जिस प्रकार प्रकृति संस्कृति पर प्रभाव डालती है उसी प्रकार संस्कृति भी प्रकृति पर प्रभाव डालती है।"[1]

कृषि प्रधान युग से औद्योगिकीकरण और शहरीकरण के युग तक के सफर में मनुष्य की भूमिका में दिन-ब-दिन परिवर्तन होता रहा है। कृषि प्रधान युग में जीवनयापन करनेवाले मनुष्य के मन में पारिस्थितिकी के प्रति सौहार्द का भाव था। पारिस्थितिकी भी अपनी प्राकृतिक धन सम्पदा के अक्षुण्ण भंडार मानव पर खुले हाथ से लुटाती थी। मनुष्य और पारिस्थितिकी के बीच के इस आदान-प्रदान की प्रक्रिया में पारिस्थितिकीय संतुलन हमेशा स्थिर बना रहता था। किंतु आधुनिक युग में जैसे-जैसे मानव कृषि सभ्यता से दूर होता गया, वैसे-वैसे पारिस्थितिकी तंत्र के साथ उसका रिश्ता टूटता गया है। वर्तमान युग में औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, निजीकरण तथा वैश्वीकरण के मायाजाल में फंसकर मनुष्य प्रकृति का अन्धाधुन्ध दोहन कर रहा है। प्राकृतिक संसाधनों का अनुचित दोहन, बढ़ती आबादी, औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, वनों का विनाश और खनिज संसाधनों की बेशुमार लूट के कारण पारिस्थितिकी का संतुलन बिगड़ गया है। आज संपूर्ण विश्व में वायु, जल, भूमि, ध्वनि, ग्लोबल वार्मिंग, युरेनियम तथा समुद्री प्रदूषण की बड़ी समस्या उत्पन्न हुई है। आज हिंदी साहित्य के इतिहास में पारिस्थितिकी विषय को आधार बनाकर व्यापक स्तर पर लिखा जा रहा है। पारिस्थितिकी संकट की समस्या पर लिखने वाले हिंदी के प्रतिनिधि उपन्यासकारों में कमलेश्वर, एस. आर. हरनोट, नासिरा शर्मा, शांता कुमार, अभिमन्यु अनंत, कामतानाथ, नवीन जोशी, अलका सरावगी, विद्यासागर नौटियाल, व्रजेश बर्मन, संजीव, कुसुम कुमार, महुआ माजी, रत्नेश्वर सिंह और भालचंद्र जोशी आदि का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

पारिस्थितिकी का सबसे महत्वपूर्ण उपादान है जल जो भोगवादी विकास व्यवस्था के कारण आज सबसे ज्यादा क्षतिग्रस्त हुआ है। पारिस्थितिकी साहित्य में पर्यावरण विनाश और प्राकृतिक संसाधनों की बेशुमार लूट का मुख्य कारण पूँजीवाद और आधुनिक जीवन शैली को माना गया है। नब्बे के दशक में भूमंडलीकरण, उदारीकरण, निजीकरण और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को व्यापार के न्यौतो ने समग्र विश्व को 'विश्वग्राम' में परिवर्तित कर दिया है। भूमंडलीकरण की आड़ में विश्व के धन संपन्न राष्ट्र गरीब राष्ट्रों पर शिकंजा कसने का प्रयास कर रहे हैं। उदारीकरण और निजीकरण के माध्यम से धन संपन्न राष्ट्र गरीब राष्ट्रों पर अपना आर्थिक वर्चस्व प्रस्थापित करना चाहते हैं। विश्व बैंक और मुद्रा कोष के समर्थन से बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ संपूर्ण विश्व में अपना जाल फैला रही है। अमेरिकन पत्रिका 'फॉर्चून' के अनुसार जल उद्योग से मिलने वाला मुनाफा तेल क्षेत्र के मुनाफे की तुलना में चालीस प्रतिशत हो गया है। विश्व बैंक तेल की तरह ही जल के आयात व्यवस्था पर भी जोर दे रही है। भारत में भी इसका प्रभाव काफी हद तक दिखाई दे रहा है। नदी जैसी राष्ट्रीय संपत्ति को किसी निजी हाथों में सौंपकर वहां के मूल निवासियों को बलपूर्वक नदी में जाने से रोका जा रहा है। इस गम्भीर समस्या के प्रति अपने विचारों को अभिव्यक्त करते हुए नासिरा शर्मा लिखती हैं "छत्तीसगढ़ में भिलाई के पास शिवनाथ नदी की 22 कि.मी की पट्टी को एक निजी कंपनी के हाथ में देकर वहां के लोगों के लिए नदी में प्रवेश पर रोक लगा दी गई है। इस तरह से हम देखते हैं कि नदियों के अस्तित्व पर खतरें के बादल मंडरा रहे हैं। वह दिन बहुत दूर नहीं है जब हमें अपनी ही नदियां पराई लगने लगेगी।"[2] छत्तीसगढ़ में स्थित शिवनाथ नदी पिछले दो दशक से एक कारोबारी के कब्जे में है। अविभाजित मध्यप्रदेश सरकार ने 1998 ई. में शिवनाथ नदी का बाईस किलोमीटर का क्षेत्र बेचने का अनुबंध किया है। यह अनुबंध बाईस वर्षों के लिए किया गया था। जिसे छत्तीसगढ़ की राज्य सरकार ने ओर तीस साल के लिए बढ़ा दिया है। मेरे अनुमान से देश में नदी के निजीकरण का यह पहला प्रयोग था। राष्ट्रीय जल नीति 2019 के मसौदे में सरकार पानी के निजीकरण पर विचार कर रही है। मुझे लगता है कि सरकार ने जिस तरह से बिजली और टेलीफोन को निजी हाथों में सौंपा है वैसे जल की आपूर्ति को निजी हाथों में सौंपना नहीं चाहिए।विश्व के अनेक देश आज जल-संकट की समस्या से जूझ रहे हैं। पानी के एक-एक बूंद के लिए तरसते देशों की ओर आज किसी का ध्यान नहीं है। जब युद्धों की बात होती है, तो करोड़ों रूपयों के सहायता की घोषणाएं तत्काल की जाती है। किंतु जल प्रदूषण जैसे गम्भीर समस्या से राहत पाने के लिए एक कौड़ी भी खर्च नहीं करते हैं। क्योंकि इन महाशक्तियों के लिए जल से अधिक युद्ध महत्वपूर्ण है। विश्व मानवता की रक्षा करने का दंभ भरनेवाली यह महाशक्तियां युद्धों के माध्यम से दुनिया पर अपना वर्चस्व स्थापित करना चाहती है। 'कुइयाँजान' में नासिरा शर्मा लिखती हैं "इराक़ युद्ध के लिए अमेरिका कांग्रेस ने राष्ट्रपति बुश को बिना देर किए 75 अरब डॉलर देने की घोषणा कर दी; मगर ऐसी कोई तत्काल घोषणा उसने जल समस्या पर नहीं की और ऐसा ही कुछ हाल हमारे अपने देश का है।"[3] संक्षेप में कह सकते हैं कि आज विश्व का प्रत्येक देश जल प्रदूषण की समस्या से जूझ रहा है। जल की कमी अब किसी एक देश की नहीं बल्कि विश्व के सभी देशों की समस्या बन चुकी है। वायु

पारिस्थितिकी का महत्वपूर्ण आयाम है। संपूर्ण जीवों और वनस्पतियों में वायु विद्यमान है। धरती और आकाश के बीच वायु तैरती है। डॉ. बैजनाथ सिंह लिखते हैं "आकाश और वायु एक दूसरे से परिवेष्टित है आकाश में वायु है और जो कुछ भी आकाश में फैलता है वह वायु के सहारे चलता है।"[4] आज मानव निर्मित स्वचलित वाहनों तथा कल-कारखानों से निसृत होनेवाले धुएं से वायु मण्डल सर्वाधिक प्रदूषित हुआ है। वायु में मिलकर विभिन्न प्रकार के विषैली गैस जैसे कार्बनडाई ऑक्साईड, कार्बनमोना ऑक्साईड, हाइड्रोजन सल्फाईड, नाइट्रोजन ऑक्साईड तथा ओजोन मानव स्वास्थ्य, पेड़-पौधों और जीव-जंतुओं को हानि पहुंचाते हैं। बैजनाथ सिंह लिखते हैं "औद्योगिकीकरण के पश्चात हवा में अनेकों रसायन और उनकी गैसें मिलती हैं और धीरे-धीरे लोगों के स्वास्थ्य पर बुरा असर डालती है।"[5] वर्तमान दौर में सबसे अधिक वायु प्रदूषण मानवकृत है जो निरंतर विकराल रूप धारण कर रहा है। वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकी अविष्कारों ने मानव की सुख-सुविधा को बढ़ाया है। किन्तु मनुष्य अपने तत्कालिक सुख में इतना अन्धा हो गया है कि अपनी हानियों के बारे में भी सोचता नहीं है। 2 दिसंबर 1998 की रात भोपाल की यूनियन कार्बाइड कारखाने से निकली जहरीली गैस से तीन हजार से अधिक लोगों की मृत्यु हुई थी। इस भयानक हादसे का जिक्र अलका सरावगी ने 'एक ब्रेक के बाद' उपन्यास में प्रस्तुत किया है। वह लिखती हैं "भोपाल में जब यूनियन कार्बाइड की फैक्टरी से जहरीली गैस फैली होगी, उसके पहले क्या उन लोगों ने सोचा होगा कि उनकी जिंदगी इस तरह अचानक तबाह हो जाएगी।"[6] भोपाल गैस काण्ड में जहरीली हवा के वर्षन से साँस घुटकर तीन हजार से अधिक लोगों की मौत हुई और कई लोग शारीरिक एवं बौद्धिक विकलांगता के शिकार हुए हैं। आज कई तरह की गैसों की वजह से 'अल्ट्रावायलेट रेस' को रोकने वाली ओजोन की परत कम होती जा रही है। उसमें छेद तो पड़ ही चुका है और आज भी यह छेद बढ़ता ही जा रहा है। छेद का बढ़ना पारिस्थितिकी के अस्तित्व के लिए खतरें की घंटी है। ओजोन की परत पतली हो जाने पर 'अल्ट्रावायलेट रेस' से पौधे जल जाएँगे तथा मनुष्यों में त्वचा कैंसर की सम्भावनाएँ बढ़ जाती है। ऐसी अनेक विनाशक प्रकियाओं की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करना इक्कीसवीं सदी के प्रतिनिधि उपन्यासों का प्रधान उद्देश्य रहा है।आधुनिक युग में अमोनिया गैस रिसाव की खबरें लगातार आ रही है। अमोनिया गैस साँस के द्वारा मानवी शरीर में प्रवेश करता है। मानवी शरीर पर इसके काफी दुष्प्रभाव देखने को मिलते हैं। अमोनिया गैस जब मानवी शरीर में प्रवेश करता है तो फेफड़े, हृदय, किडनी, लीवर और दिमाग पर इसका गहरा प्रभाव डालता है। अगर अमोनिया गैस शरीर में ज्यादा देर तक रह जाएँ तो मौत भी हो सकती है। वर्तमान समय में अमोनिया गैस का प्रयोग औद्योगिक क्षेत्र में क्लीनर के रूप में व्यापक स्तर पर किया जा रहा है। अमोनिया गैस रिसाव की समस्या पर 'रह गई दिशाएं इसी पार' में संजीव लिखते हैं "एक दिन नीचे से अमोनिया की तीखी बदबू फैलने लगी। गंध इतनी उत्कट थी कि दुर्गंध में ही सदा नहायी रहने वाली लड़कियों का भी दम घुटने लगा। चीख-पुकार पर शुभा ने कहा अमोनिया प्लांट लीक कर गया है।"[7] वर्तमान समय में अमोनिया गैस से वायु प्रदूषण का स्तर व्यापक मात्रा में बढ़ चुका है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के रिपोर्ट के अनुसार भारत की आबोहवा में अमोनिया गैस का स्तर काफी ज्यादा है। पारिस्थितिकी संरक्षण के लिए

इसे नियंत्रण में रखना अत्यंत आवश्यक है।इक्कीसवीं सदी में रेडिएशन प्रदूषण की समस्या को केंद्र में रखकर लिखा गया महुआ माजी का 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' उपन्यास उनके चार वर्ष के शोधकार्य का परिणाम है। निःसंदेह एक खोजी पत्रकार और गंभीर शोधार्थी की तरह झारखंड के बीहड़ जंगलों और जापान-अमेरिका के परमाणु संयंत्रों का जायजा लेकर उन्होंने विषय से संबंधित हर छोटी-बड़ी आवश्यक जानकारी को संजोया है। 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' में महुआ माजी ने सत्ता द्वारा स्थापित पूंजीवादी विकास के मॉडल को केंद्र में रखकर युरेनियम खदान से फैलने वाले विकिरण, अयस्क से युरेनियम को अलग करने की प्रक्रिया के बाद निकले अपशिष्ट पदार्थों से होनेवाले प्रदूषण और इन सबके फलस्वरूप विस्थापन से जूझते आदिवासियों के जीवन संघर्ष को प्रस्तुत किया है। उपन्यास में विनाश के व्यापक खतरों की ओर संकेत करते हुए महुआ माजी लिखती हैं "परमाणु संयंत्रों में एक हजार मेगावाट बिजली पैदा करने से करीब 27 किलोग्राम रेडियोधर्मी कचरा उत्पन्न होता है और उसे निष्क्रिय होने में एक लाख साल से भी ज्यादा का वक्त लग सकता है।"[8] युरेनियम प्रदूषण की समस्या केवल मरंग गोड़ा के आदिवासियों की समस्या नहीं है बल्कि वह वैश्विक समस्या है। लेखिका लिखती हैं "युरेनियम के विकिरण की समस्या सिर्फ मरंग गोड़ा के आदिवासियों की समस्या नहीं है बल्कि पूरी दुनिया में जहां-जहां युरेनियम की खदानें है- अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका... हर जगह के आदिवासी किसी-न-किसी रूप में पीड़ित हैं।"[9] स्पष्ट है कि युरेनियम के खदानों से जो रेडियोधर्मी प्रदूषण फैल रहा है, उसका दुष्प्रभाव संपूर्ण मानवजाति को भुगतना पड़ रहा है। आज विश्व में ग्लोबल वार्मिंग का विषय सर्वविदित है। इस बात से भी इन्कार नहीं किया जा सकता है कि वर्तमान में ग्लोबल वार्मिंग वैश्विक समाज के समक्ष मौजूद सबसे बड़ी चुनौती है। ग्लोबल वार्मिंग के दुष्परिणाम बड़े ही घातक होते हैं। वर्तमान समय में ग्लोबल वार्मिंग के कारण ग्लेशियर पिघल रहे हैं। समुद्र तथा नदियों का जलस्तर बढ़ रहा है, जिसके परिणामस्वरूप प्राकृतिक आपदाओं और कुछ द्वीपों के डूबने का ख़तरा बढ़ गया है। वर्तमान में ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन, औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, वनोन्मूलन, रासायनिक कीटनाशकों एवं उर्वरक का प्रयोग, ब्लैक कार्बन तथा जंगलों में लगनेवाली आग आदि के कारण ग्लोबल वार्मिंग का संकट दिन-ब-दिन बढ़ता जा रहा है। हिंदी के प्रसिद्ध उपन्यासकार रत्नेश्वर सिंह ने 'रेखना मेरी जान' उपन्यास के माध्यम से ग्लोबल वार्मिंग जैसी वैश्विक समस्या को बड़े प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। वे लिखते हैं "गंगोत्री ग्लेशियर, जो लगभग 30.2 किलोमीटर क्षेत्र में फैला हुआ है, दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा ग्लेशियर है। पिछले कई दशकों से इसके सिकुड़ने की गति चौगुनी हो गई है। अहमदाबाद के अंतरिक्ष एप्लीकेशन केंद्र की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत के 2,767 ग्लेशियर में से 2,184 ग्लेशियर में पिघलने की गति तेज़ है। ग्लेशियरों के पिघलन की तेज़ गति की सबसे बड़ी वजह ब्लैक कार्बन व बढ़ती धूल है। जंगलों में लगनेवाली आग व ग्रीनहाउस गैस के असर की भी इसमें भूमिका है। यही कारण ग्लोबल वार्मिंग के लिए ज़िम्मेदार हैं।"[10] बढ़ते तापमान, साल-दर-साल बदलते मौसम और ग्लोबल वार्मिंग से आम आदमी ही नहीं बल्कि वैज्ञानिक भी परेशान हुए हैं। यदि वर्तमान गति से पारिस्थितिकी प्रदूषण जारी रहा तो एक दिन मुंबई, न्यूयार्क, लंदन, पेरिस, मालदीव और

बांग्लादेश जैसे देशों के अधिकांश भूखंड समुद्र में जलमग्न हो सकते हैं। लेखक प्रस्तुत उपन्यास के माध्यम से यहीं चेतावनी देना चाहते है कि नॉर्थ पोल के ग्लेशियरों का बड़ा हिस्सा पिघल जाएगा तो ऐसे में अनेक देश समुद्र में समाहित होने के कगार पर खड़े हैं। निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि इक्कीसवीं सदी का उपन्यासकार पारिस्थितिकी सजगता से संपन्न हैं। पारिस्थितिकी का संबंध संपूर्ण भौतिक एवं जैविक व्यवस्था से है। यदि प्रदूषण को रोका नहीं गया तो प्राकृतिक सम्पदा के साथ-साथ मानव का अस्तित्व भी इस धरती से मिट जाएगा। इक्कीसवीं सदी के उपन्यास पारिस्थितिकी पर पड़े घातक एवं असंतुलित अवस्था को हटाने का संदेश देते हैं। प्रस्तुत उपन्यासों में उपन्यासकारों ने पारिस्थितिकी को बचाने के लिए कटिबद्ध होने का संकल्प किया है और वर्तमान यंत्र युग में यंत्र बने मानव को पुन्हः इन्सानी भावों में लौटाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है।

संदर्भ ग्रंथ :

1. समकालीन हिंदी साहित्य में पर्यावरण विमर्श - संपादक डॉ. ए. एस. सुमेष, अमन प्रकाशन, कानपुर, 2020, पृ.सं. 41
2. कुइयाँजान - नासिरा शर्मा, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005, पृ.सं. 89-90
3. वही, पृ.सं. 89
4. पर्यावरण रक्षा - डॉ. बैजनाथ सिंह, एस. चन्द. एण्ड कं.लि. रामनगर, नई दिल्ली, 1995, पृ.सं. 135
5. वही, पृ.सं. 151
6. एक ब्रेक के बाद - अलका सरावगी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008, पृ.सं. 127
7. रह गई दिशाएं इसी पार - संजीव, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011, पृ.सं. 178
8. मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ - महुआ माजी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012, पृ.सं. 369-370
9. वही, पृ.सं. 222
10. रेखना मेरी जान-रत्नेश्वर सिंह, ब्लूवर्ड प्रकाशन, पटना, 2017, पृ.सं. 26